**ओ३म्**

**“ईश्वर सर्वव्यापक है, इस कारण उसका अवतार नहीं**

**होता। उसका ध्यान ही उसकी पूजा व उपासना है”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

हमारा संसार और हम किसी एक सत्ता द्वारा निर्मित वा प्रादूर्भूत हैं। वह सत्ता कौन व कैसी है? उस सत्ता को जानने के लिए विचार करें तो दो प्रमुख बातें हमारे सामने उपस्थित होती हैं। प्रथम कि वह सत्ता ज्ञानवान ही हो सकती है। ज्ञानहीन सत्ता से न तो जड़ सृष्टि की रचना हो सकती है और न ही प्राणि जगत अस्तित्व में आ सकता है। ज्ञान चेतन का गुण है, जड़ पदार्थों का नहीं। अतः यह ज्ञात होता है कि वह सत्ता जिससे यह संसार बना व चल रहा है, जड़ सत्ता न होकर चेतन सत्ता है। अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि उस सत्ता की उत्पत्ति कब व कैसे हुई? यदि उस सत्ता की उत्पत्ति को मानते हैं तो इसका अर्थ है कि उसे उत्पन्न करने वाली कोई दूसरी सत्ता है जो उससे बड़ी व पुरानी है। विचार करने पर ऐसी किसी सत्ता का होना सम्भव नहीं है क्योंकि यदि इसे स्वीकार किया जाये तो फिर प्रश्न होगा कि वह सत्ता जब एक सृष्टिकर्ता को बना सकती है तो दो व अधिक और सृष्टिकर्ता भी बना सकती है। ऐसा होने पर अनेक सृष्टिकर्ता होने से संसार में अनेक प्रकार की सृष्टियों का होना स्वीकार करना पड़ेगा। इससे सर्वत्र अव्यवस्था फैल सकती है। यह विचार भी चिन्तन करने पर सम्भव प्रतीत नहीं होता। अतः विचार कर यही स्वीकार करना होता है कि वह सत्ता स्वयंभू व नित्य है। वह अनादि व अनुत्पन्न धर्मा है। वह सदा से है। भाव सत्ता व पदार्थ का कभी अभाव नहीं हो सकता, इस वैज्ञानिक नियम के अनुसार उसे भाव मानकर उसका कभी नाश न होना, अर्थात् उसका हर काल व समय में होना, अस्तित्व बने रहना, इस तथ्य को स्वीकार करना ही पड़ता है। अतः सृष्टि को उत्पन्न करने वाली सत्ता अनादि, अनुत्पन्न, नित्य, सदा रहने वाली, ज्ञानवान सिद्ध होती है तथा वह दो, तीन व अधिक न होकर केवल और केवल एक ही है।

 हम जिस सृष्टिकर्ता सत्ता के अस्तित्व पर विचार कर रहे हैं उसके बारे में यह भी मुख्य प्रश्न है कि क्या वह एकदेशी है व सर्वव्यापक? एकदेशी का अर्थ है कि सीमित क्षेत्र तक ही उसका अस्तित्व होता है। सीमित आकार होने से उसका ज्ञान व सामर्थ्य भी सीमित ही होती है। इस परिप्रेक्ष्य में जब हम इस संसार वा ब्रह्माण्ड पर विचार करते हैं तो हमें यह अनन्त प्रतीत होता है। एकदेशी सत्ता के द्वारा इस अनन्त परिमाण वाले ब्रह्माण्ड का निर्माण कदापि नहीं हो सकता। अतः यह सिद्ध हो जाता है कि वह सत्ता इस पूरे ब्रह्माण्ड में सर्वत्र विद्यमान व व्यापक है। तभी तो उसने प्रकृति के सूक्ष्म परमाणुओं से इस सृष्टि वा कार्य जगत को बनाया है। इससे वह सत्ता सर्वव्यापी व सर्वव्यापक सिद्ध होती है। इसी प्रकार से उस सृष्टिकर्ता सत्ता के अन्य गुणों व स्वरूप का ज्ञान भी प्राप्त किया जा सकता है।

 हम सृष्टिकर्ता सत्ता को उसके गुण वाचक नामों से पुकार सकते हैं। ईश्वर का अर्थ होता है कि वह परम ऐश्वर्य वाला है। अर्थात् संसार का सभी ऐश्वर्य उसी ईश्वर का है। इस समस्त संसार व इसके ऐश्वर्य का स्वामी उस ईश्वर से इतर अन्य कोई सत्तात्मक पदार्थ नहीं है। वह ईश्वर इस संसार में प्रत्येक स्थान पर समान रूप से विद्यमान है। इसी कारण यह सृष्टि अस्तित्व में आ सकी है और विद्यमान रहकर सृष्टि वा विज्ञान के नियमों का पालन करते हुए स्थित है। वह सत्ता हमें आंखों से दिखाई नहीं देती तो इसका तर्कपूर्ण समाधान यही है कि वह अत्यन्त सूक्ष्म है क्योंकि सूक्ष्म पदार्थ आंखों से दृष्टिगोचर नहीं होते। इस प्रकार से सृष्टि रचना व उसकी स्थिति पर विचार करने से इस सृष्टि की रचयिता एक शक्ति ईश्वर का अस्तित्व होना सिद्ध हो जाता है।

 मध्यकाल अज्ञान का युग था। महाभारत काल में हमारे देश के ऋषि व विद्वान मारे गये व अधिक आयु के कारण मृत्यु को प्राप्त हो गये। शिक्षा की समुचित व्यवस्था न होने व उस समय के लोगों के आलस्य प्रमाद आदि कारणों से नये विद्वान व ऋषि उस काल में न हो सके जिससे धीरे धीरे ज्ञान की उपलब्धि का स्तर कम होता गया। उस काल में देश में वेद और अनेक शास्त्रीय ग्रन्थ तो थे परन्तु उनका सत्य व यथार्थ अर्थ जानने वाले विद्वान न थे। इस कारण उस काल के लोगों को भ्रान्तियां होने लगी जिसका परिणाम यह हुआ कि यज्ञों में पशुओं को मारकर आहुतियां दी जाने लगीं और कल्पना कर ली गई कि वैदिक हिंसा हिंसा नहीं होती। जिस पशु को यज्ञ के निमित्त मारा जाता है वह स्वर्ग को प्राप्त होता है, ऐसी मिथ्या धारणाओं को तत्कालीन कुछ विद्वान लोगों ने स्वीकार कर लिया। यह सब मान्यतायें अज्ञान के कारण उत्पन्न हुईं। कालान्तर में ईश्वर के अवतार की कल्पना भी कर ली गई। श्री राम व श्री कृष्ण आदि को ईश्वर का अवतार घोषित कर दिया गया। अन्य ब्रह्मा जी, विष्णु जी व शिव जी के भी काल्पनिक अवतारों को माना जाने लगा और उनसे सम्बन्धित ग्रन्थों की रचनायें की गई जिन्हें पुराणों के नाम से जाना जाता है। यहां प्रश्न यह उपस्थित होता है कि ईश्वर को अवतार लेने की आवश्यकता क्यों पड़ती है? इसका कारण यह है कि मध्यकाल में अज्ञान इस मात्रा तक था और अज्ञान के साथ लोगों के स्वार्थ भी जुड़ गये, जिससे इस प्रकार की कल्पनायें की गईं। मूल प्रश्न यही है कि जब सृष्टि को देखकर ईश्वर सर्वव्यापक व सूक्ष्म सिद्ध होता है और ईश्वर प्रदत्त ज्ञान **‘‘चार वेद”** में भी **‘ईशा वास्यं इदम् सर्वम्’** कहकर उसको सर्वव्यापक बताया गया है और उसे अज अर्थात् अजन्मा कहा गया है, तो फिर अवतारवाद का सिद्धान्त सत्य क्योंकर हो सकता है? अगर अवतारवाद का सिद्धान्त सत्य है तो फिर मध्यकाल व उससे पूर्व उन विद्वानों द्वारा घोषित महापुरूषों के अतिरिक्त अवतारों का उत्पन्न होना बन्द क्यों हो गया? आजकल अवतार उत्पन्न क्यों नहीं होते? आतंकवादी क्या रावण व कंस से कम हानिकर व कम बलशाली हैं?

 इस पर विचार करने पर अवतारवाद का सिद्धान्त मिथ्या सिद्ध होता है। वेदों में अवतारवाद के सिद्धान्त का लेशमात्र उल्लेख नहीं है। वेदों के सबसे बड़े विद्वान ऋषि दयानन्द ने अवतारवाद की मिथ्या मान्यता का खण्डन तर्क, युक्ति व प्रमाणों से किया है। सभी अवतार शरीरधारी थे जबकि वह ईश्वर एक चेतन व सर्वव्यापक सत्ता सिद्ध होती है जो स्वयभूं व सर्वशक्तिमान है। इस कारण ईश्वर को अवतार लेने की आवश्यकता नहीं है। ईश्वर का एक गुण उसका सर्वव्यापक होना है। कोई भी अवतार सर्वव्यापक नहीं था। ईश्वर का अवतार हो सकता असम्भव है, अतः अवतार न होने के कारण वह महापुरुष हो सकते हैं, ईश्वर नहीं। दूसरा कारण यह भी है कि अवतारों ने जो कार्य किये बताते हैं वह साधारण कार्य हैं। आज ईश्वर बिना अवतार लिए भी अधर्मियों व अन्यायकारियों का निराकार स्वरूप से ही प्राणहरण करता है। पूर्व में भी उसी ने अधमिर्यों का विनाश सर्वव्यापक स्वरूप से किया है। उसने सृष्टि को बिना अवतार लिये ही बनाया है और इसका पालन भी बिना अवतार धारण किये विगत लगभग 2 अरब वर्षों से कर रहा है। सृष्टि के आदि से आज तक असंख्य व अगणित लोग पैदा हुए व मरे। उस सब व्यवस्था को ईश्वर ने बिना अवतार धारण किये ही सम्पन्न किया। आज विश्व में 7 अरब से अधिक लोग हैं। अन्य प्राणियों की गणना करना सम्भव नहीं है। ऐसे असंख्य लोग इस ब्रह्माण्ड में है। अतः अनन्त जीवात्माओं को जन्म व मरण की व्यवस्था करने वाला ईश्वर, रावण या कंस की हत्या करने के लिए अवतार धारण करें, यह मान्यता विद्वानों की दृष्टि में हास्यास्पद है। रावण व कंस से भी अधिक बलशाली लोगों का वध तो ईश्वर संकल्प मात्र से कर सकता है, अतः रावण आदि पापियों को मारने के लिए अवतार लेने की मान्यता सत्य सिद्ध नहीं होती। अवतारवाद का सिद्धान्त गलत है तो मूर्तिपूजा भी गलत सिद्ध होती है।

वेद ईश्वरीय ज्ञान है। वेदों में सब सत्य विद्यायें हैं। सब सत्य विद्याओं के ग्रन्थ वेदों से भी मूर्तिपूजा का होना सिद्ध नहीं होता न कोई मूर्तिपूजक आज तक सिद्ध ही कर पाया है। अतः मूर्तिपूजा वेदविरुद्ध होने से उचित नहीं है। ईश्वर सर्वव्यापक व निराकार है। अतः उसके गुणों को जानकर उनको स्मरण करते हुए व उसके मुख्य नाम ओ३म् व गायत्री मंत्र का जप करते हुए उसकी उपासना करनी चाहिये। उपासना का यही विधान प्राचीन शास्त्रकार येग दर्शन के ऋषि पतंजलि और सांख्य दर्शन के रचयिता महर्षि कपिल आदि ने किया है। अतः ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र व सृष्टिकर्ता सिद्ध होता है व वह ऐसा ही है भी। अतः ईश्वर के सत्य स्वरूप का ध्यान, उसका गुण कीर्तन, स्तवन, जप व प्रार्थना सहित उसके स्वरूप का चिन्तन ही उसकी पूजा, उपासना व भक्ति है। ईश्वर का सत्य स्वरूप जानकर व सत्याचरण करने से ही जीवन का कल्याण हो सकता है। ऐसी शिक्षा ही वेद व वैदिक साहित्य से मिलती है। उपनिषद, दर्शन, मनुस्मृति सहित रामायण व महाभारत आदि में भी इसी प्रकार से ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना के प्रमाण मिलते हैं। अतः मनुष्यों को अविद्या का मार्ग छोड़कर महर्षि दयानन्द प्रदर्शित ज्ञान मार्ग का अनुसरण करना चाहिये जिससे उनका जीवन सार्थक होकर वह धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष को प्राप्त कर उन्नति कर सके। इससे इतर ईश्वर की प्राप्ति व जीवन उन्नति का अन्य कोई मार्ग नहीं है। ईश्वर सर्वव्यापक है व एक है। वही सबका पूज्य, उपासनीय एवं भक्ति करने योग्य है। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

 **-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**